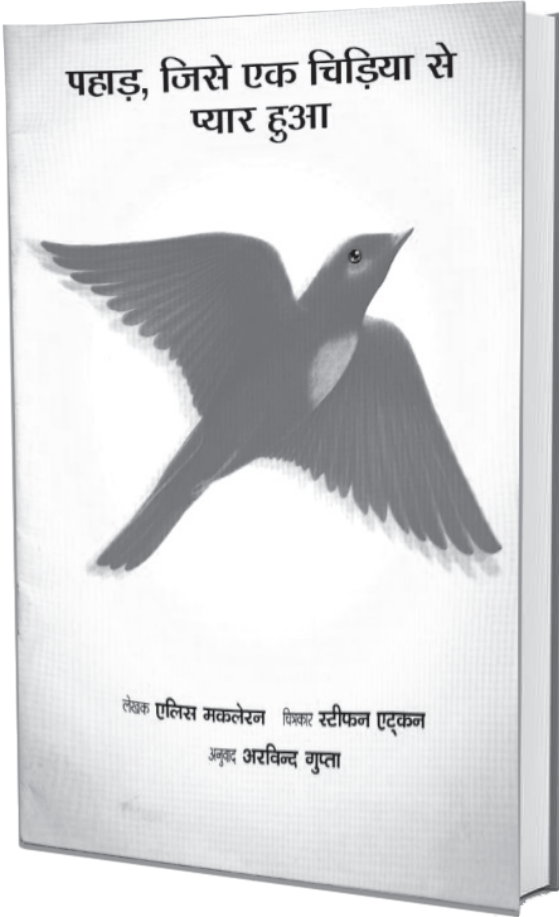


पहाड़, जिसे एक चिड़िया से प्यार हुआ

प्रभात



पहाड़, जिसे एक चिड़िया से प्यार हुआ

लेखक : एलिस मकलेरन

प्रकाशक : तूलिका प्रकाशन

एलिस मकलेरन द्वारा लिखित और अरविन्द गुप्ता द्वारा हिन्दी में अनूदित *पहाड़, जिसे चिड़िया से प्यार हुआ* कहानी की पहली ही पंक्ति से दो पैराग्राफ़ तक पहाड़ के अभावों का चित्र खींचा गया है। इसे पढ़ते हुए पंक्ति-दर-पंक्ति यह महसूस होता है कि ये पहाड़ की नैसर्गिक इच्छाएँ हैं जो काश किसी तरह पूरी हो सकतीं! पहाड़ फ़िलहाल दूसरों के बिना है जोकि वह होना नहीं चाहता है। वह उससे दूर हो गए अपने और आसपास के साथ रहना चाहता है। वह उस सबको अपने दिल में जगह देना चाहता है।

सूखे, पथरीले पहाड़ की इस तड़प को व्यक्त करने के लिए जो भाषा बुनी गई है, वह यादों और आकांक्षाओं की ओस-भीगी नर्म हरी घास की पत्तियों से बुनी गई है। जैसे कि लेखिका को मालूम हो कि सूखे में प्राण लौटाने के लिए जल-भरी भाषा ही चाहिए।

सूर्य, चन्द्रमा, तारों और बादलों की उपस्थिति ने उसके अकेलेपन को विराट बना दिया है। लेखिका लिखती हैं कि उस वीरान रेगिस्तान में देखने के लिए और कुछ था ही नहीं। जैसे उस 'और कुछ' के बिना सूर्य, चन्द्रमा, तारों और बादलों का होना न होना बराबर है। खास मायने

नहीं रखता है। हम महसूस करते हैं कि जिनके अपने उनसे खो जाते हैं, सूर्य, चन्द्रमा, तारे और बादल भी उनके लिए खोए हुआ की तरह ही उपस्थित रहते हैं। जैसा कि सूरदास ने गोपियों के लिए कृष्ण के अभाव को लिखते हुए कहा था, “जेई जेई सुखद, दुखद अब तेई तेई।” यानी, उनके होने से जो-जो भी सुख देने वाला था, उनके न होने पर वह सब दुख देने वाले में बदल गया है।

कहते हैं, और ग्रहों पर जीवन नहीं है। पहाड़ किसी और ग्रह पर होता, तब शायद उसके दुख के कारण के लिए कोई जगह वहाँ नहीं होती। लेकिन चूँकि वह पृथ्वी का बाशिन्दा है, जहाँ जीवन है। पृथ्वी पर जीवन का होना और पहाड़ के जीवन में उस जीवन का अभाव होना ही उसके दुख का कारण है। पहाड़ कवि तो है नहीं जो यह लिखकर सह जाए कि—

‘जो नहीं है,
उसका गम क्या?
वो नहीं है।’



लेकिन कवि शमशेर भी जब ऐसा कह रहे हैं, तब इस कहन में भी जो नहीं है उसी के लिए गम है, उसी के लिए रुदन है। ऐसा लिखकर तो वे नहीं के गम को सहने की ताकत जुटाने की कोशिश कर रहे हैं।

भारत की अँग्रेज़ी लेखिका अरुंधति राय अपने उपन्यास *गॉड ऑफ़ स्माल थिंग्स (मामूली चीज़ों का देवता)* में एक से अधिक बार एक बात कहती हैं। वह बात यह है कि एक पल में चीज़ें बदल जाती हैं। यह बात मुझे एक महाकाव्यात्मक सच्चाई की तरह लगती है। मैं सोचता हूँ, ऐसा ही तो होता है। कोई एक चीज़, कोई एक बात, किसी एक घटना ने हमारी ज़िन्दगी को पूरी तरह से बदल दिया होता है। एक दिशा में चल रही ज़िन्दगी किसी एक बात के कारण, किसी एक पल के कारण दूसरी दिशा में चलने लगती है, और अपनी पहले वाली दिशा से फिर कभी जाकर नहीं भी मिलती है। हम जानते हैं कि ज़िन्दगी छोटी होती है। उसके पास लौटने के लिए एक पल का भी समय नहीं होता है। सो पहाड़ के एकाकी जीवन में एक दिन चिड़िया आती है।



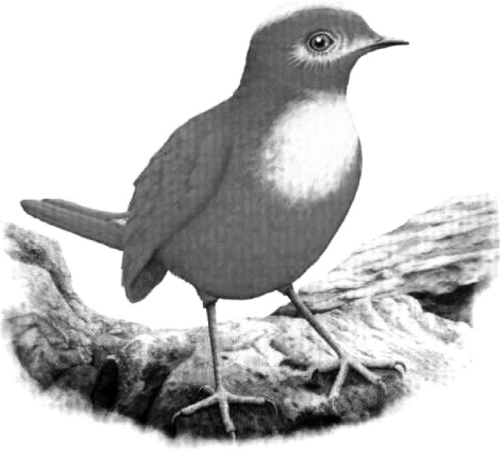


उसके आने पर पहाड़ को जो महसूस हुआ वह तो कविता ही है, उसका पाठ तो छोड़ ही दें, और कहानी में पहाड़ की पहली आवाज़ को महसूस करते हुए सुनें, “कौन हो तुम?” पहाड़ ने पूछा, “तुम्हारा नाम क्या है?” इस एक पल ने पहाड़ के जीवन को बदल दिया। आगे की कहानी इसी एक पल, इसी एक वाक्य का विस्तार है। या यूँ कहें कि यह वाक्य कहानी में वो स्थान है जहाँ से कहानी की अपनी भाषा का झरना फूट पड़ा है। आप देखिए, इस झरने में भाषा का कैसा पानी है, “मैं चिड़िया हूँ।” चिड़िया ने उत्तर दिया। “मेरा नाम खुशी है। मैं दूर देश से आई हूँ, जहाँ...!” आप जानते ही हैं कि वहाँ क्या है, और चिड़िया की अपनी ज़िन्दगी की उधेड़बुनें क्या हैं।

पहाड़ और चिड़िया, दो पात्र, दो चरित्र हैं इस कहानी में। आप इन चरित्रों के बीच जो संवाद हो रहा है उसे देखिए। इन संवादों से पता चलती इनके हृदयों की उदारता, उज्वलता और विराटता देखिए। निष्कम्प, निर्भार कहना और सुनना देखिए, इनके शब्दों का स्पन्दन और उससे उठते स्वतःस्फूर्त संगीत को सुनिए। पहाड़ कहता है, “क्या तुम्हारा यहाँ से जाना बिलकुल ज़रूरी

है? क्या तुम यहाँ पर रह नहीं सकती हो?” खुशी ने सिर हिलाया। “चिड़ियाँ ज़िन्दा जीव होती हैं।” उसने समझाया। “उन्हें ज़िन्दा रहने के लिए भोजन और पानी चाहिए होता है। यहाँ पर खाने के लिए कुछ भी नहीं उगा है। न ही यहाँ कोई झरना है जिससे मैं पानी पी सकूँ।”

कहानी का यह संवाद क्या स्पष्ट करता है? कहानी का यह संवाद यह स्पष्ट करता है कि चिड़िया किसी परिस्थिति में आ तो गई है, लेकिन उसके रुकने की कोई सूरते-हाल यहाँ नहीं है। इसलिए वह जाएगी और पहाड़ की ज़िन्दगी फिर वैसी ही सूनी हो जाएगी। उसकी ज़िन्दगी में कुछ बदलने वाला नहीं है। लेखक अपनी कारीगरी से कहानी में ऐसे उतार-चढ़ाव पैदा करने की ऐसी कुव्वत रखता है कि साँसें थम जाएँ। कहानी के भीतर लगा यह एक ऐसा जाम है कि कहानी को आगे नहीं पढ़ें, तो हमें कभी पता नहीं चलेगा कि यह जाम आखिर खुलेगा कैसे। इसलिए हम कहानी को आगे पढ़ते हैं। साहित्य में जिसे आकर्षण कहते हैं, वह यही है। साहित्य खुद किसी किरदार की तरह अपने प्रेम में हमें खींच लेता है, और हम खिंचते चले जाते हैं। इस तरह साहित्य के चरित्र हमारे जीवन में अपनी जीवन्त उपस्थिति बना लेते हैं। हमारे पड़ोसियों और दोस्तों की तरह। शब्द साहित्य नहीं है, न ही कोरा पाठ साहित्य है। शब्द और पाठ के बीच के संवाद से जो बात बनती है, वह साहित्य है। शब्द और पाठ के आपसी संवाद से साहित्य जीवन्त होता है। चकमक के दो पत्थरों की रगड़ से उत्पन्न चिंगारी को देखने में जो सुख है, साहित्य पढ़ने में भी चिंगारी, यानी रोशनी, को पा लेने का सुख है। वरना कोई वजह नहीं कि हम साहित्य पढ़ें।



पहाड़ को तो चिड़िया की चाह है। लेकिन चिड़िया में भी वैसी चाह न हो, तो प्रेम की नैसर्गिक सृष्टि नहीं होगी। कवि या लेखक अपनी रचना के प्रजापति होते हैं, ऐसा हमारे संस्कृत साहित्य में कहा गया है—

अपारे काव्य संसारे, कविरेव प्रजापति।

यथा वै रोचते विश्वं, तत्थेदं परिवर्तते॥

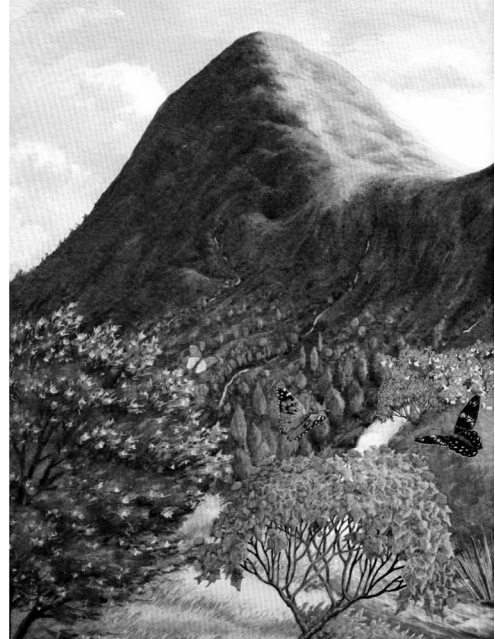
अपनी रचना की स्वाधीन सृष्टा होने के नाते लेखिका चिड़िया के पहाड़ से प्रेम के तर्क की सृष्टि करती हैं। चिड़िया कहती है, “मुझे दूर-दूर तक जाना होता है, और बीच-बीच में आराम लेने के लिए मैं अनेकों पहाड़ों पर रुकती हूँ। पर आज तक किसी पहाड़ ने मेरे आने-जाने की कोई परवाह नहीं की। इसलिए मैं तुम्हारे पास दुबारा अवश्य लौटना चाहती हूँ।” चिड़िया के मन में पहाड़ को लेकर प्रेम पैदा होने की बात को कहने के लिए इतना काफ़ी था, लेकिन चिड़िया के मन में प्रेम में होने वाली उधेड़बुनों की शुरुआत भी हो जाती है। प्रेम के पहले पल के बाद भावनाओं के स्तर पर चीज़ें तेज़ी से घटना शुरू हो जाती हैं। चिड़िया के इस संवाद में हम उसके स्वर में चिन्तित होने के भाव को पकड़ सकते हैं। जब वह बेकली से साथ यह कहती है, “लेकिन ऐसा मैं वसन्त में अपना घोंसला बनाने से पहले ही कर पाऊँगी।” हम महसूस कर सकते हैं उनके बीच क्या हो गया है। वही, जो किताब का शीर्षक है। उनकी

और क्या चिन्ताएँ हैं, कहानी में आगे के संवाद उन चिन्ताओं में डूबे हुए हैं।

नन्ही कोमल चिड़िया की चिन्ता कितनी ठोस, कितनी वाज़िब, कितनी मुनासिब और कितनी विकट लगने लगती है, जब वह कहती है, “हाँ, एक बात और जिसे तुम्हें समझना चाहिए। पहाड़ हमेशा-हमेशा के लिए होते हैं, पर चिड़ियों के साथ ऐसा नहीं है। ...चिड़ियों की उम्र लम्बी नहीं होती।” कहानी में जिस तरह से और जहाँ यह संवाद आता है कि चिड़ियों की उम्र लम्बी नहीं होती, पहाड़ पर दुख का पहाड़ ही जैसे टूट जाता है। आगे वह जो कहता है उससे यही झलकता है कि जीवन में कैसी-कैसी विवशताएँ हैं, कैसी-कैसी निरुपायता।

“खुशी पहाड़ की ओट में चुपचाप बैठी रही। फिर वो एक मधुर गाना गाने लगी — बिलकुल घण्टी की आवाज़ जैसा। पहाड़ के जीवन में यह पहला संगीत था।”

आगे जीवन नहीं है, लेकिन जब तक वह है उसका गान गाय जा सकता है। साहित्य जीवन से है, जीवन के लिए है, अपने पात्रों के





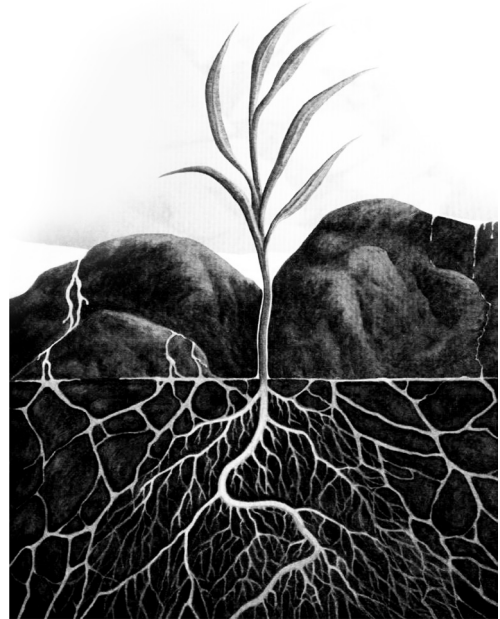
साथ-साथ उसे भी संघर्ष करना पड़ता है। संघर्ष करती हुई भाषा भी साहित्य का एक आकर्षण है। संघर्ष करते हुए साहित्य की हमारे दिल में एक अलग ही जगह होती है।

चिड़िया के उस संवाद की तो चर्चा ही क्या की जाए जहाँ कहानी अपने चरम को छू लेती है। चिड़िया कहती है, “क्योंकि मैं केवल कुछ ही सालों तक ज़िन्दा रहूँगी, इसलिए मैं अपनी एक बेटी का नाम खुशी रखूँगी, और उसे तुम तक पहुँचने का रास्ता बताऊँगी। मेरी बेटी भी अपनी बेटी का नाम खुशी रखेगी। हर खुशी अपनी एक बेटी का नाम खुशी रखेगी। कितने ही बरस क्यों न बीतें, तुम्हारा अभिनन्दन करने के लिए हमेशा-हमेशा एक नन्ही मित्र जरूर आएगी। वो तुम्हारे ऊपर उड़ेगी और तुम्हें मधुर गीत सुनाएगी।”

मुझे लगता है लेखिका ने यह कहानी लिखी, और कहानी में वह मोड़ आया जिसमें उसे कल्पना के सौन्दर्य की उड़ान भरने का यह अवसर मिला। और बतौर पाठक उस उड़ान के साथ उड़ने के सुख को हम भी पा सके।

कल्पना का सौन्दर्य, भावनाओं का सौन्दर्य, भाषा का सौन्दर्य, एक शब्द में कहें तो साहित्य का सौन्दर्य। साहित्य के सौन्दर्य का कौन-सा रूप है जो इस कहानी में हमें नहीं मिलता। जब चिड़िया पहाड़ को अलविदा कहकर एक साल के लिए चली जाती है। इतना कहने से

भी कहानी आगे बढ़ ही जाती कि “अलविदा कहकर चिड़िया उड़ गई।” लेकिन लेखिका इस क्षण को समारोह की तरह रचते हुए लिखती हैं, “और वो उड़ गई। उसके पंख सूर्य की रोशनी में झिलमिला रहे थे। पहाड़ उसे लगातार टकटकी लगाए देखता रहा। फिर वो दूर, अन्तहीन शून्य में विलीन हो गई।” यह है भाषा का सौन्दर्य। पूरी कहानी की भाषा कुछ और होती और यह इतनी-सी बात इस तरह लिखी होती तो यही सौन्दर्य बेअसर हो जाता। सौन्दर्य की यह रचना कहानी से अलग-थलग और सायास नहीं है। कहानी की भाषा के बहते झरने में यह असल में वह जगह है जहाँ पानी पर सूर्य की चमक कुछ ज़्यादा पड़ रही है। भाषा की यह रोशनाई कहानी में शुरू से आखिर तक फैली है। अच्छे साहित्य में यही होता है, और यह लेखक द्वारा तभी सम्भव होता है जब वह रचना के उस क्षण को पा ले, जहाँ सायासपन के लिए कोई गुंजाइश न बचे। रचना की भाषा ऐसे बहने लगे जैसे ज़मीन पर कोई नदी बहती है। इस तरह देखें तो साहित्य की प्रकृति भी, प्रकृति से कुछ भिन्न नहीं है। यानी, साहित्य की भी अपनी





नैसर्गिकता होती है। साहित्य के उसी नैसर्गिक सौन्दर्य को हम उसमें निहारते हैं, इसीलिए किताब उठाकर पढ़ने लगते हैं।

संगीत में जैसे वाद्य यंत्रों से उठने वाली ध्वनियों का रस होता है, साहित्य में भी भाषा की अनुगूँजों का रस होता है। इस कहानी में यह जो कहा गया कि “फिर वो दूर, अन्तहीन शून्य में विलीन हो गई।” हम हमारी दृष्टि जहाँ तक पहुँचती है वहीं तक देख पाते हैं। उसके बाद हमारे लिए शून्य पसर जाता है। तो एक शून्य तो यह है जो कहानी ने इस वाक्य के जरिए हमें बताया। लेकिन कहानी में इस वाक्य से जो अनुगूँज पैदा हुई, इस वाक्य के कहे जाने पर जो ध्वनि वाक्य के पास लौटकर आई, उससे हमने जाना कि एक शून्य वह भी है जो चिड़िया के चले जाने से पहाड़ के मन में पसर गया है। हरेक पाठक इस शून्य में विलीन होने को अपनी तरह से देख सकता है कि चिड़िया के साथ-साथ शून्य में क्या विलीन हो गया है। प्रेम विलीन हो गया है, कि आशा विलीन हो गई है, कि क्या...। चिड़िया कहकर तो गई है कि अगले वसन्त में फिर आएगी, लेकिन क्या पता!

इस पल की वास्तविकता तो यही है कि वह शून्य में विलीन हो गई है। पहाड़ के लिए यह वास्तविकता काफ़ी कठोर है, जाहिर है चिड़िया के लिए भी।

हर वसन्त में एक चिड़िया पहाड़ के पास आती है और उसे अपना मधुर गीत सुनाती है। लेकिन पहाड़ के लिए इस गीत में कोई मधुरता नहीं, बल्कि उदासी है। वह जानता है कि चिड़िया लौट जाने के लिए आई है। पहाड़ के लिए इससे मुश्किल कोई बात नहीं। इससे अच्छा तो वह पहले ही था जब उसकी ज़िन्दगी में यह भावनाओं को रेतता हुआ इन्तज़ार न था। उसके दुख की गहराई की थाह क्या है, यह या तो पहाड़ जानता है या इस चरित्र को रचने वाली लेखिका। लेखिका ही हमें बताती हैं कि सौवें वसन्त पर “पहाड़ ने खुशी को आसमान में विलीन होते हुए देखा, और अचानक उसका दिल टूट गया। सख्त पत्थर फट गया पहाड़ के अन्तःकरण से, आँसुओं की धार झरने की तरह बहने लगी।” कहानी में यह एक और चरम है, एक और ऊँचाई।

कहते हैं, प्रेम में बड़ी शक्ति होती है। इस कहानी में प्रेम की शक्ति के सौन्दर्य को हम दो जगह उद्घाटित होते देखते हैं— एक तब जब खुशी कहती है, “क्योंकि मैं केवल कुछ ही सालों तक ज़िन्दा रहूँगी, इसलिए मैं अपनी एक बेटी का नाम खुशी रखूँगी, और उसे तुम तक पहुँचने का रास्ता बताऊँगी।” यह कहकर वह पहाड़ के लिए एक अमर आशा को रच देती है। और दूसरी जगह कहानी में यह है, जब हम सख्त पत्थर के हृदय को फटता हुआ देखते हैं, और वहाँ से एक झरने को फूटते हुए देखते हैं। यह असल में प्रेम का अजर-अमर झरना है। प्रेम में बड़ी शक्ति होती है, इस कहानी

ने इस मुहावरे को मेरे लिए व्यंजित कर दिया है। कितने मुहावरे हैं जो तब तक केवल कोरे शब्द-भर होते हैं हमारे लिए, जब तक कि जीवन में उनकी कोई बानगी हमें न मिल जाए। साहित्य जीवन के मुहावरों को खोलने वाली बानगियों को खोज-खोजकर और चुन-चुनकर हमारे लिए लाता है।

किताब में एक चित्र है जिसमें चिड़िया पहाड़ के आँसुओं के बहते सैलाब को देख रही है। क्या इसकी कोई व्याख्या की जा सकती है, वह क्या देख रही है और क्या महसूस कर रही है? कहानी में यह वो पल है जो व्याख्या से परे है। इसकी व्याख्या की ज़रूरत तो महसूस होती है, लेकिन यह कुछ ऐसा है जिसकी व्याख्या हो नहीं सकती। क्या हमारी भाषा में अव्याख्येय जैसे शब्द का सृजन जीवन या साहित्य की ऐसी ही किसी परिस्थिति में हुआ होगा? कहानी खुद ही इसकी व्याख्या करने की कोशिश-सी करती है जब उसमें यह पंक्ति आती है, “मैं अगले साल वापस आऊँगी।” खुशी हल्के स्वर में कहकर उड़ गई। इससे पहले कहानी में कभी चिड़िया ने यह बात इतने हल्के स्वर में नहीं कही थी। इस बार उसने इस बात को हल्के स्वर में कहा क्योंकि उसके स्वर में पहाड़ के आँसुओं के सैलाब का भार था। जब हम घने रुदन से भरे होते

हैं, तब बोलना ही पड़े तो हल्का-सा बोलते हैं बाक्री चुपचाप अपना काम करते रहना चाहते हैं। जीवन के सघन अनुभवों के बिना साहित्य, साहित्य नहीं बन पाता है। दूसरे शब्दों में, साहित्य अपनी कहानी कहते-कहते कब हमारी कहानी कहने लगता है, हमसे बेहतर कौन जानता है, अगर हमने साहित्य के साथ कुछ समय बिताया है तो।

अपने महान उपन्यास *अन्ना करेनिना* की शुरुआत लियो टॉलस्टॉय ने इस पंक्ति से की है, “दुनिया के सभी सुखी परिवार एक ही तरह से सुखी होते हैं, लेकिन हर दुखी परिवार का दुख उसका अपना निजी और अलग होता है।” इस कहानी में भी यहीं तक दुख की गाथा है, आगे तो सुख के दिन हैं। हालाँकि उनका भी अपना प्रभाव है, अपना आनन्द है। उन सुखों के रस की निष्पत्ति इस वाक्य में आकर हो जाती है, “मैं खुशी हूँ।” उसने गाया, “और मैं यहाँ रहने आई हूँ।”

अब कहानी में कोई अभाव नहीं बचा। साहित्य का काम अभावों को भरना है। उसके बाद उसका काम खत्म हो जाता है। कोई कला आखिर कितना काम करेगी। इस कहानी ने जितना किया, क्या वह काफ़ी नहीं है। कला का अपना अनुशासन, अपनी तहज़ीब होती है। क्या हम सूर्य से चाहेंगे कि वह रात में भी चमके!

प्रभात शिक्षा के क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से कार्य कर रहे हैं। दो कविता संग्रह *अपनों में नहीं रह पाने का गीत* साहित्य अकादमी से व *जीवन के दिन* राजकमल से प्रकाशित। बच्चों के लिए कविता, कहानियों की कई किताबें प्रकाशित। विभिन्न लोक भाषाओं में बच्चों के लिए ढेर सारी किताबों का पुनर्लेखन-सम्पादन। आप युवा कविता समय सम्मान-2012, सृजनात्मक साहित्य पुरस्कार-2010, और बिग लिटिल बुक अवॉर्ड-2019 से सम्मानित हो चुके हैं।

सम्पर्क : prabhaat@gmail.com